[2018] 2 उम. नि. प. 1

ज्येष्ठ प्रबंधक (पी. एंड डी.) रीको लिमिटेड

बनाम

राजस्थान राज्य और एक अन्य

3 नवम्बर, 2017

न्यायमूर्ति ए. के. सीकरी और न्यायमूर्ति अशोक भूषण

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 195(1)(ख)(ii) – मिथ्या साक्ष्य विरचित करने के लिए अभियोजन – अपीलार्थी द्वारा जारी किए जाने के लिए तात्पर्यित पत्र की कूटरचना करने का अभिकथन – अभिकथित कूटरचित पत्र का एक पृथक् सिविल वाद में पहले ही न्यायालय के समक्ष फाइल किया जाना – चूंकि सिविल मामले में न्यायालय के समक्ष पत्र फाइल किए जाने के पश्चात् कूटरचना कारित करने का मामला साबित नहीं होता है इसलिए धारा 195(1)(ख)(ii) लागू नहीं होगी ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 190 – अपराध का संज्ञान – कूटरचना का अभिकथन – यदि अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य विद्यमान नहीं है कि कूटरचित दस्तावेज़ वास्तव में अभियुक्त द्वारा तैयार किया गया था तो अभियुक्त के विरुद्ध प्रथमदृष्ट्या कोई मामला नहीं बनता है तथा उसके विरुद्ध संज्ञान नहीं लिया जा सकता है ।

प्रस्तुत मामले में प्रादेशिक प्रबंधक, रीको, श्रीगंगानगर द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 को उसके भागीदार के माध्यम से एक पत्र जारी किया जाना तात्पर्यित था । जब अपीलार्थी को, जोकि प्रादेशिक प्रबंधक के रूप में कार्य कर रहा था और जिसने अभिकथित रूप से उक्त पत्र पर हस्ताक्षर किए थे, उस पत्र के बारे में पता चला तो उसने प्रत्यर्थी सं. 2 को 24 घंटे के भीतर पत्र की मूल प्रति प्रस्तुत करने के लिए कहा । प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय के समक्ष वह पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था बल्कि वह पत्र मैसर्स कान्हा रिफाइंड ऑयल एंड वनस्पति प्राइवेट लिमिटेड बनाम रीको लिमिटेड नामक वाद में उसके काउंसेल द्वारा प्रस्तुत किया गया था । अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट फाइल की जिसमें

यह अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा उस पत्र की कूटरचना की गई है और उसे कार्यालय से चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी द्वारा प्रेषित करा दिया गया । यह अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा कपट करके, कूटरचित और मिथ्या दस्तावेज़ तैयार किया गया, इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 467, 468 और 471 के अधीन अपराध बनता है । धारा 420 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । अंतिम रिपोर्ट कोतवाली पुलिस थाने के निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत की गई थी । अंतिम रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया था कि चूंकि वह पत्र वाद सं. 2/84 में फाइल किया गया है इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए पुलिस मामले का अन्वेषण नहीं कर सकती है । अंतिम रिपोर्ट को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लेते हुए स्वीकार कर लिया गया था । अपीलार्थी ने अपर सेशन न्यायाधीश के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया, जिसने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश को अपास्त कर दिया और मामले को प्रतिप्रेषित कर दिया । विचारण न्यायालय ने परिवादी को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात् एक नया आदेश पारित किया । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने प्रतिप्रेषण के पश्चात्, पुनः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि वह पत्र सिविल वाद में फाइल किया गया है इसलिए संज्ञान नहीं लिया जा सकता है । विरोध याचिका खारिज कर दी गई थी और अंतिम रिपोर्ट स्वीकार कर ली गई थी । अपीलार्थी द्वारा उस आदेश को चुनौती देते हुए दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया गया था । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का उपबंध प्रस्तुत मामले के तथ्यों को लागू नहीं होता है । पुनरीक्षण न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और निचले न्यायालय को यह निदेश दिया कि वह फाइल पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर विधि के अनुसार आदेश पारित करे । पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश के पश्चात्, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामले पर पुनः विचार किया और अपीलार्थी की विरोध याचिका नामंजूर कर दी । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब नहीं लिया था बल्कि अभिलेख पर मौजूद सामग्री को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त के विरुद्ध कूटरचित दस्तावेज़ और कपट करने का प्रथमदृष्ट्या मामला साबित नहीं हुआ है । उस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा अपर सेशन न्यायाधीश के न्यायालय के समक्ष

एक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया था, जोकि खारिज कर दिया गया है । उक्त आदेश को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन याचिका फाइल करके उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है । उच्च न्यायालय के उक्त आदेश को उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील में चुनौती दी गई है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रस्तुत मामला एक ऐसा मामला है जिसमें तारीख 10 अप्रैल, 1992 के पत्र के बारे में यह दावा किया गया है कि वह कूटरचित पत्र है और उस पर अपीलार्थी ने हस्ताक्षर नहीं किए हैं । अभिलेख पर मौजूद सामग्री से यह स्पष्ट होता है कि उक्त पत्र मामला सं. 2/84 में न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया था । यह पक्षकथन नहीं है कि कूटरचना न्यायालय में पत्र फाइल किए जाने के पश्चात् कारित की गई थी । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के अधीन उपबंध लागू नहीं होता था । अंतिम रिपोर्ट का परिशीलन करने पर, जोकि कोतवाली पुलिस थाने के निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत की गई थी, यह स्पष्ट होता है कि निरीक्षक ने अन्वेषण करने के पश्चात् अंततः यह निष्कर्ष निकाला कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) को ध्यान में रखते हुए पुलिस इस मामले का अन्वेषण नहीं कर सकती है । (पैरा 9)

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के आधार पर दी गई दलील प्रस्तुत अपील का विनिश्चय करने के लिए सुसंगत नहीं है । वास्तव में, जैसा कि पहले ऊपर उल्लेख किया गया है, परिवादी की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के लागू न होने से संबंधित दलील को निचले न्यायालयों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है । इस प्रकार, अपीलार्थी द्वारा उपर्युक्त दलील के बल पर कोई फायदा प्राप्त नहीं किया जा सकता है । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अपने आदेश में तथा पुनरीक्षण न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार किया है और वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभियुक्त के विरुद्ध इस संबंध में कोई प्रथमदृष्ट्या मामला साबित नहीं हुआ है कि उसने कोई कूटरचना या दस्तावेज़ की कूटरचना करके कोई कपट कारित किया है । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने रिपोर्ट के प्रति भी निर्देश किया है । पुनरीक्षण न्यायालय ने भी अपीलार्थी की समस्त दलीलों पर विचार करने के पश्चात् पुनरीक्षण को गुणागुण के आधार पर खारिज कर दिया है । पुनरीक्षण न्यायालय के उपर्युक्त आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उच्च न्यायालय ने भी यह निष्कर्ष निकाला कि अभिलेख पर कोई ऐसा साक्ष्य नहीं है जिससे यह

संकेत मिलता हो कि वह पत्र प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा तैयार किया गया था । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश में कोई अवैधता नहीं पाई जा सकती है । यद्यपि, अंतिम रिपोर्ट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लेने के आधार पर प्रस्तुत की गई थी किन्तु रिपोर्ट प्रस्तुत करने से पूर्व पुलिस थाना कोतवाली के निरीक्षक द्वारा अन्वेषण किया गया था और अंतिम रिपोर्ट में अन्वेषण के दौरान संगृहीत समस्त सामग्री के प्रतिनिर्देश किया गया था । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) प्रस्तुत मामले को लागू नहीं होती है, अपने निर्णय द्वारा निचले न्यायालय को यह निदेश दिया है कि वह उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर विधि के अनुसार आदेश पारित करे । अतः, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री की परीक्षा की और यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त के विरुद्ध संज्ञान लेने के लिए कोई पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं है । उच्च न्यायालय ने भी यही दृष्टिकोण अपनाया, जिसमें कोई त्रुटि नहीं है । पूर्वगामी विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए, इस अपील में कोई गुणागुण नहीं है । (पैरा 10, 11, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2005] (2005) 4 एस. सी. सी. 370 :
इकबाल सिंह मरवाह और एक अन्य बनाम
मीनाक्षी मरवाह और एक अन्य ; 8

[1998] (1998) 2 एस. सी. सी. 493 :
सचिदानंद सिंह और एक अन्य बनाम **बिहार राज्य और एक अन्य** । 3

दांडिक अपीली अधिकारिता : 2017 की दांडिक अपील सं. 1845.

2012 की एकल न्यायपीठ प्रकीर्ण याचिका सं. 320 में राजस्थान उच्च न्यायालय की जोधपुर न्यायपीठ द्वारा पारित तारीख 7 फरवरी, 2017 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री डा. मनीष सिंघवी, इरशाद अहमद और शैलजा नन्दा मिश्रा

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री रूचि कोहली, निधि जायसवाल, भव्या टंडन, सर्वश्री अजय कुमार तलेसरा,

एस. सरफराज़ करीम, तेजस्वी कुमार और अम्बर कमरूद्दीन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अशोक भूषण ने दिया ।

न्या. भूषण – यह अपील राजस्थान उच्च न्यायालय के तारीख 7 फरवरी, 2017 के उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा उस एकल न्यायपीठ दांडिक प्रकीर्ण याचिका को खारिज कर दिया गया था, जोकि अपीलार्थी द्वारा अपर सेशन न्यायाधीश के तारीख 22 जुलाई, 2011 के उस निर्णय को प्रश्नगत करते हुए फाइल की गई थी जिसके द्वारा अपीलार्थी की ओर से फाइल की गई दांडिक पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी गई थी ।

2. इस अपील को उद्भूत करने वाले तथ्यों से अपीलार्थी द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन तारीख 29 अप्रैल, 1992 को दर्ज की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट से उद्भूत होने वाली मुकदमेबाजी के अनेक प्रक्रम प्रकट होते हैं ।

3. इस मामले के संक्षिप्त तथ्य, जिनका इस अपील का विनिश्चय करने के लिए उल्लेख करना आवश्यक है, निम्नलिखित हैं :–

प्रादेशिक प्रबंधक, रीको, श्रीगंगानगर द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 मैसर्स कान्हा रिफाइंड ऑयल एंड वनस्पति प्राइवेट लिमिटेड को रवि सेतिया (भागीदार) के माध्यम से तारीख 10 अप्रैल, 1992 का एक पत्र जारी किया जाना तात्पर्यित था । जब अपीलार्थी को, जोकि प्रादेशिक प्रबंधक के रूप में कार्य कर रहा था और जिसने अभिकथित रूप से उक्त पत्र पर हस्ताक्षर किए थे, तारीख 10 अप्रैल, 1992 के पत्र के बारे में पता चला तो उसने तारीख 23 अप्रैल, 1992 को प्रत्यर्थी सं. 2 को 24 घंटे के भीतर पत्र की मूल प्रति प्रस्तुत करने के लिए कहा । प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय के समक्ष वह पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था बल्कि तारीख 27 अप्रैल, 1992 को वह पत्र मैसर्स कान्हा रिफाइंड ऑयल एंड वनस्पति प्राइवेट लिमिटेड बनाम रीको लिमिटेड नामक 1984 के वाद मामला सं. 2 में उसके काउंसेल द्वारा प्रस्तुत किया गया था । अपीलार्थी ने तारीख 29 अप्रैल, 1992 को भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 184 फाइल की जिसमें यह अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा तारीख 10 अप्रैल, 1992 को एक पत्र की कूटरचना की गई है और उसे कार्यालय से चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी, रघुवीर सिंह द्वारा तारीख 10 अप्रैल, 1992 को प्रेषित

करा दिया गया । यह अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा कपट करके, कूटरचित और मिथ्या दस्तावेज़ तैयार किया गया, इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 467, 468 और 471 के अधीन अपराध बनता है । धारा 420 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । अंतिम रिपोर्ट कोतवाली पुलिस थाने के निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत की गई थी । अंतिम रिपोर्ट में, यह उल्लेख किया गया था कि चूंकि तारीख 10 अप्रैल, 1992 वाला पत्र मामला सं. 2/84 में फाइल किया गया है इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए पुलिस मामले का अन्वेषण नहीं कर सकती है । अंतिम रिपोर्ट को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लेते हुए तारीख 22 मई, 1998 के आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया था । अपीलार्थी ने अपर सेशन न्यायाधीश के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया, जिसने अपने तारीख 1 मई, 2000 के आदेश द्वारा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश को अपास्त कर दिया और मामले को प्रतिप्रेषित कर दिया । विचारण न्यायालय ने परिवादी को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात् एक नया आदेश पारित किया । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने प्रतिप्रेषण के पश्चात्, पुनः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि वह पत्र सिविल वाद में फाइल किया गया है इसलिए संज्ञान नहीं लिया जा सकता है । विरोध याचिका खारिज कर दी गई थी और अंतिम रिपोर्ट स्वीकार कर ली गई थी । अपीलार्थी द्वारा तारीख 12 मार्च, 2003 के आदेश को चुनौती देते हुए दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया गया था । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का उपबंध प्रस्तुत मामले के तथ्यों को लागू नहीं होता है । पुनरीक्षण न्यायालय ने **सचिदानंद सिंह और एक अन्य** बनाम **बिहार राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब दस्तावेज़ न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने से पूर्व कूटरचित रीति में तैयार किया गया है तब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के उपबंध को लागू नहीं किया जा सकता है । पुनरीक्षण न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और निचले न्यायालय को यह निदेश दिया कि वह फाइल पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर विधि के अनुसार आदेश पारित

---

[1] (1998) 2 एस. सी. सी. 493.

करे ।

4. निर्णय का प्रभावी भाग निम्नलिखित रूप में हैं :–

"आदेश

अतः, पुनरीक्षणकर्ता के पुनरीक्षण को मंजूर करते हुए तारीख 12 मार्च, 2003 के आदेश को एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है और अधीनस्थ न्यायालय को यह आदेश दिया जाता है कि वह फाइल पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर और परिवादी को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात् विधि के अनुसार नए सिरे से आदेश पारित करेगा । मामले से संबंधित फाइल तारीख 8 अगस्त, 2003 को अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की जाएगी ।"

5. पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश के पश्चात्, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामले पर पुनः विचार किया और तारीख 20 जून, 2009 के आदेश द्वारा अपीलार्थी की विरोध याचिका नामंजूर कर दी । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पुनरीक्षण न्यायालय के इस आदेश की अवेक्षा की कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का फायदा प्रस्तुत मामले के अभियुक्त को प्रदान नहीं किया जा सकता है । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब नहीं लिया था बल्कि अभिलेख पर मौजूद सामग्री को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त के विरुद्ध कूटरचित दस्तावेज़ और कपट करने का प्रथमदृष्ट्या मामला साबित नहीं हुआ है । तारीख 20 जून, 2009 के आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा अपर सेशन न्यायाधीश के न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया था, जोकि तारीख 22 जुलाई, 2011 को खारिज कर दिया गया है । तारीख 22 जुलाई, 2011 के आदेश को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन याचिका फाइल करके उच्च यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 7 फरवरी, 2017 को खारिज कर दिया गया है, जिस आदेश को इस अपील में चुनौती दी गई है ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल डा. मनीष सिंघवी ने यह दलील दी कि प्रस्तुत मामले में तारीख 10 अप्रैल, 1992 वाला कूटरचित पत्र सिविल न्यायालय में तारीख 27 अप्रैल, 1992 को, अर्थात् पत्र की कूटरचना करने के पश्चात् फाइल किया गया था । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के उपबंध लागू नहीं होते थे और विधि में अपराध का

संज्ञान लेने के लिए कोई प्रतिषेध नहीं था । उसने यह निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं. 2 उस पत्र का फायदाग्राही था, जोकि उसे संबोधित था, अतः निचले न्यायालयों को अपराध का संज्ञान लेना चाहिए था । उसने यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अपराध का संज्ञान न लेकर गलती कारित की है ।

7. प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी के काउंसेल की दलील का खंडन करते हुए यह दलील दी कि प्रस्तुत मामला ऐसा मामला है जिसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) से संबंधित कोई विवाद्यक नहीं है । उसने यह दलील दी कि विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने तारीख 20 जून, 2009 के अपने आदेश में विरोध याचिका को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के वर्जन के आधार पर खारिज नहीं किया है बल्कि उसने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने के लिए प्रथमदृष्ट्या कोई मामला नहीं बनता है । उसने आगे यह दलील दी कि अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि वह पत्र प्रादेशिक प्रबंधक के कार्यालय से प्रेषित किया गया था और इसके अलावा यह भी अभिलेख पर लाया गया है कि कार्यालय के एक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी श्री रघुवीर सिंह ने उस पत्र को प्रेषित किया था । उसने यह दलील दी कि अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे प्रथमदृष्ट्या ही यह संकेत मिलता हो कि पत्र की कूटरचना करने में प्रत्यर्थी सं. 2 अंतर्वलित था । उसने यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने सामग्री पर विचार करने के पश्चात् ठीक ही यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी के विरुद्ध फाइल की गई विरोध याचिका को मंजूर करने के लिए कोई मामला साबित नहीं हुआ है ।

8. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की दलीलों पर विचार किया है और अभिलेख का परिशीलन किया है । जहां तक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) के संबंध में अपीलार्थी की दलील का संबंध है, संविधान न्यायपीठ के निर्णय द्वारा विधि सुस्थापित नहीं की गई है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) केवल तभी लागू होगी जब किसी दस्तावेज़ की बाबत, जब उसे किसी न्यायालय में की किसी कार्यवाही में साक्ष्य में प्रस्तुत करने या दिए जाने के पश्चात् उक्त उपबंध में प्रगणित अपराध कारित किए जाते हैं । **इकबाल सिंह मरवाह और एक अन्य** बनाम

मीनाक्षी मरवाह और एक अन्य[1] वाले मामले में संविधान न्यायपीठ ने पैरा 33 और 34 पर निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया था :–

> "33. ऊपर की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारी यह राय है कि सचिदानंद सिंह वाला मामला ठीक तौर पर विनिश्चित किया गया है और उसमें अपनाया गया दृष्टिकोण सही है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) केवल तभी लागू होगी जब किसी दस्तावेज़ की बाबत, जब उसे किसी न्यायालय में की किसी कार्यवाही में साक्ष्य में प्रस्तुत करने या दिए जाने के पश्चात्, उस समय के दौरान जब वह दस्तावेज़ न्यायालय की अभिरक्षा में था, उक्त उपबंध में प्रगणित अपराध कारित किए जाते हैं ।
>
> 34. प्रस्तुत मामले में वसीयत को न्यायालय में बाद में प्रस्तुत किया गया है । किसी ने भी यह पक्षकथन नहीं किया है कि उक्त वसीयत की बाबत, उसे जिला न्यायाधीश के न्यायालय में प्रस्तुत या फाइल किए जाने के पश्चात्, धारा 195(1)(ख)(ii) में यथा-प्रगणित कोई अपराध कारित किया गया था । इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) द्वारा सृजित वर्जन लागू नहीं होगा और प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए परिवाद के आधार पर अपराध का संज्ञान करने के संबंध में न्यायालय की शक्ति पर कोई प्रतिरोध नहीं है । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण पूर्णतः सही है और उसमें हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है ।"

9. अब हम प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर पुनः विचार करते हैं, प्रस्तुत मामला एक ऐसा मामला है जिसमें तारीख 10 अप्रैल, 1992 के पत्र के बारे में यह दावा किया गया है कि वह कूटरचित पत्र है और उस पर अपीलार्थी ने हस्ताक्षर नहीं किए हैं । अभिलेख पर मौजूद सामग्री से यह स्पष्ट होता है कि तारीख 10 अप्रैल, 1992 का उक्त पत्र मामला सं. 2/84 में न्यायालय के समक्ष तारीख 27 अप्रैल, 1992 को फाइल किया गया था । यह पक्षकथन नहीं है कि कूटरचना न्यायालय में पत्र फाइल किए जाने के पश्चात् कारित की गई थी । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) के अधीन उपबंध लागू नहीं होता था । अंतिम रिपोर्ट का परिशीलन करने पर, जोकि कोतवाली पुलिस थाने के निरीक्षक द्वारा

---

[1] (2005) 4 एस. सी. सी. 370.

प्रस्तुत की गई थी, यह स्पष्ट होता है कि निरीक्षक ने अन्वेषण करने के पश्चात् अंततः यह निष्कर्ष निकाला कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) को ध्यान में रखते हुए पुलिस इस मामले का अन्वेषण नहीं कर सकती है । अंतिम रिपोर्ट उपाबंध पी. 4 के रूप में फाइल की गई है, जिसका परिशीलन करने पर यह उपदर्शित होता है कि निरीक्षक ने तारीख 10 अप्रैल, 1992 का मूल पत्र मामला सं. 2/84 से अभिप्राप्त किया था और अविवादित लिखावट और अपीलार्थी की नमूना लिखावट को लिखावट विशेषज्ञ के पास भेजा था और यह राय ली गई थी कि तारीख 10 अप्रैल, 1992 के पत्र पर एस. के. शर्मा के हस्ताक्षर कूटरचित थे ।

10. पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तारीख 1 मई, 2000 को प्रतिप्रेषण के पश्चात्, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने तारीख 12 मार्च, 2003 के अपने आदेश में इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि संज्ञान नहीं लिया जा सकता है पुनः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लिया । उक्त आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण फाइल किया गया था और पुनरीक्षण न्यायालय ने तारीख 21 जुलाई, 2003 के अपने निर्णय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) से संबंधित विवाद्यक को विनिश्चित किया । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) के उपबंध लागू नहीं होते हैं । पुनरीक्षण न्यायालय ने तारीख 21 जुलाई, 2003 के अपने आदेश द्वारा अधीनस्थ न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और अधीनस्थ न्यायालय को यह निदेश दिया कि वह फाइल पर मौजूद साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् गुणागुण के आधार पर विधि के अनुसार नए सिरे से आदेश पारित करे । पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश के पश्चात् मामले को अभियुक्त की ओर से आगे नहीं चलाया गया था । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) से संबंधित विवाद्यक अपीलार्थी के पक्ष में समाप्त हो गया । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के तारीख 20 जून, 2009 के आदेश तथा पुनरीक्षण न्यायालय के तारीख 22 जुलाई, 2011 के आदेश में अपीलार्थी की विरोध याचिका को नामंजूर करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख) (ii) का अवलंब नहीं लिया गया है । अतः, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के आधार पर दी गई दलील प्रस्तुत अपील का विनिश्चय करने के लिए सुसंगत नहीं है । वास्तव में, जैसा कि पहले ऊपर उल्लेख किया गया है, परिवादी की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) के लागू न होने से संबंधित दलील को निचले न्यायालयों द्वारा स्वीकार कर लिया

गया है । इस प्रकार, अपीलार्थी द्वारा उपर्युक्त दलील के बल पर कोई फायदा प्राप्त नहीं किया जा सकता है ।

11. मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने तारीख 20 जून, 2009 के अपने आदेश में तथा पुनरीक्षण न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार किया है और वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभियुक्त के विरुद्ध इस संबंध में कोई प्रथमदृष्ट्या मामला साबित नहीं हुआ है कि उसने कोई कूटरचना या दस्तावेज़ की कूटरचना करके कोई कपट कारित किया है । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने रिपोर्ट सं. 37/97 के प्रति भी निर्देश किया है । पुनरीक्षण न्यायालय ने भी अपीलार्थी की समस्त दलीलों पर विचार करने के पश्चात् पुनरीक्षण को गुणागुण के आधार पर खारिज कर दिया है । पुनरीक्षण न्यायालय की निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों के प्रतिनिर्देश करना उपयोगी है :–

> "पुनरीक्षणकर्ता ने उपर्युक्त आक्रामक तत्वों के अनुसार, अन्वेषण के अनुक्रम में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित अपने कथनों में केवल यह कथन किया है कि रवि सेतिया ने कपट करने के लिए कूटरचना कारित करके पत्र तैयार किया था जबकि पुनरीक्षणकर्ता के कार्यालय में कनिष्ठ लेखाकार अतर सिंह ने तारीख 19 मई, 1992 को किए गए अपने कथन के दौरान यह कहा है कि तारीख 10 अप्रैल, 1992 वाला अभिकथित पत्र उसके द्वारा प्रेषित नहीं किया गया है बल्कि उसे सहायक कर्मचारी रघुवीर सिंह द्वारा प्रेषित किया गया है । इस प्रकार, उक्त पत्र की लिखावट के संदर्भ में, चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी रघुवीर सिंह की लिखावट को न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला में लिखावट विशेषज्ञ के पास भेजना आवश्यक था । इसके अतिरिक्त, न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला ने तारीख 31 जनवरी, 1998 की अपनी रिपोर्ट सं. 37/97 में यह निष्कर्ष निकाला है कि पुनरीक्षणकर्ता के हस्ताक्षर और विवादित हस्ताक्षरों का मिलान करने पर चिह्न क्यू-1 और क्यू-2 के बारे में यह कहा गया है कि वे कूटरचित हैं । किन्तु इस निष्कर्ष में यह भी उल्लिखित किया गया है कि यह सिद्ध नहीं हुआ है कि ये हस्ताक्षर किनके हैं और ये हस्ताक्षर रवि सेतिया द्वारा बनाए गए होंगे । इस प्रकार, यह किसी भी रीति में स्पष्ट नहीं हुआ है कि तारीख 10 अप्रैल, 1992 वाला पत्र प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा कूटरचित रीति में तैयार किया गया है, । अतः, इस प्रक्रम पर, प्रत्यर्थी सं. 2 के

विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 467, 468 और 471 के अधीन संज्ञान लेने के लिए कोई आधार उपलब्ध नहीं है ।"

12. पुनरीक्षण न्यायालय के उपर्युक्त आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उच्च न्यायालय ने भी यह निष्कर्ष निकाला कि अभिलेख पर कोई ऐसा साक्ष्य नहीं है जिससे यह संकेत मिलता हो कि तारीख 10 अप्रैल, 1992 वाला पत्र प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा तैयार किया गया था । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश में कोई अवैधता नहीं पाई जा सकती है । यद्यपि, अंतिम रिपोर्ट, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) का अवलंब लेने के आधार पर प्रस्तुत की गई थी किन्तु रिपोर्ट प्रस्तुत करने से पूर्व पुलिस थाना कोतवाली के निरीक्षक द्वारा अन्वेषण किया गया था और अंतिम रिपोर्ट में अन्वेषण के दौरान संगृहीत समस्त सामग्री के प्रतिनिर्देश किया गया था । पुनरीक्षण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 195(1)(ख)(ii) प्रस्तुत मामले को लागू नहीं होती है, तारीख 21 जुलाई, 2003 के अपने निर्णय द्वारा निचले न्यायालय को यह निदेश दिया है कि वह उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर विधि के अनुसार आदेश पारित करे । अतः, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री की परीक्षा की और यह निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त के विरुद्ध संज्ञान लेने के लिए कोई पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं है ।

13. उच्च न्यायालय ने भी यही दृष्टिकोण अपनाया, जिसमें हम कोई त्रुटि नहीं पाते हैं । पूर्वगामी विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए, हम इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं । तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

ग्रो.